Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 11, November-2018, ISSN 2230-7540

अंतर्जातीय विवाह के प्रति नवीन दृष्टिकोण

Savita*

M.A.C.W Jhajjar Ad-Hok. Lecturer in History, Haryana

सार - ***आधुनिक भारत में अन्तर्जातीय विवाहों में सहायक कारक प्रेम-विवाह भी आधुनिक वैवाहिक चुनौती है। इस चुनौती ने भी विवाह की संस्था की नीवों को प्रभावित किया है। चाहे इसका उदय पाश्चात्य संस्कृति के प्रभावों से हुआ हो, पर इतना अवश्य है कि वर्तमान युग में इस संबंध में भी समाज-शास्त्रियों का ध्यान आकर्षित हुआ है। प्रेम-विवाह वे विवाह होते हैं जो केवल वर-वधु के रोमॉस पर अधारित हैं। इनमें प्रेम प्रधान होता है। इस प्रकार के विवाह में वयस्क युवक और युवती अपने हार्दिक संवेगों के आधार पर हमेशा के लिये प्रणय-पाश-बद्ध होकर समाज में वैवाहिक कुरीतियों को चुनौती देने का दावा करते हैं। प्रेम विवाह को आदर्श विवाह कहकर सभी वैवाहिक समस्याओं को समाधान के रूप में मानते हैं। इस प्रकार के विवाहों को भी आज कानूनी शक्ति प्राप्त हो रही है। इन विवाहों में सामाजिक बन्धनों का लेशमात्र भी ध्यान नहीं रखा जाता है। इनमें जाति, वर्ग, कुल, दहेज, बाल विवाह आदि से ऊपर उठकर पारस्परिक सामंजस्य को विशेष महत्व दिया गया हैं***

----------X----------

परिचय

यद्यपि प्रेम विवाह कुछ सीमा तक भारत में सम्पन्न हुए हैं, तथा हो रहे हैं, पर इन्हें समाज की विवाह-संस्था के मूल्यों, आदर्शों एवं प्रतिमानों के विरूद्ध माना जा रहा है। लेकिन समाज में प्रसारित, सह-शिक्षा, सहदकार्य एवं वर्तमान सामाजिक व्यवस्था से परिपूर्ण चलचित्रों के प्रदर्शन आदि से बदलते हुए प्रतिमानों को इस संबंध में बड़ा सहयोग मिला है। इन विवाहों को मनोविज्ञान की कसौटी पर देखने से प्रतीत होता है कि इनमें भावनाओं की प्रगाढ़ता एवं परस्पर त्याग और बलिदान आदि का बड़ा महत्व है। इन विवाहों से व्यक्तित्व को स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति होती है। लेकिन दूसरी ओर इनमें वास्तविकता का अभाव, जीवन के उद्देश्यों की अनुपस्थिति एवं कल्पना होने से इनको भारत में पूर्ण सफलता नहीं मिली है, क्योंकि माता-पिता की सहमति अथवा सामाजिक स्वीकृति न मिलने से ये स्थायी नहीं हो पा रहे हैं । सामाजिक स्वीकृति के तत्वों पर विचार करते हुए बर्गेस और काटेल ने कहा है - समस्त प्राप्त सूत्र इसके लक्षणों में अनुरूप हैं कि सहचर्यता पर आधारित विवाह, सामान्य रूप में अधिक सामंजस्य पूर्ण संघ साबित होगें, उन विवाहों से जो प्रमुखतः संवेगात्मक मनोवृत्तियों से प्रभावित हैं।

इसलिये प्रेम विवाह की सफलता हेतु सामंजस्य के पक्ष को महत्व मिलना अति आवश्यक है। आज के युग में प्रेम-विवाहों में शीघ्रता अत्यधिक देखी जाती है। इससे पारस्परिक आदतों एवं विचारधाराओं में सामंजस्य नहीं होने पाता।

अतः वास्तविकता से परिचित, जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से विमुख न होने वाले दम्पत्ति इस प्रकार वैवाहिक आनन्द को प्राप्त कर सकते है। एकमात्र रोमांचकता के ही लिये इस विश्व में अवतरित हुए प्रेम-विवाह कोई सार नहीं पाते और विमुख हो जाते

भारत के प्राचीन वेद शास्त्रों में भी प्रेम विवाह के उल्लेख मिलते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के अनुसार अनियम, असमय किसी कारण से दोनों की इच्छापूर्वक वर-कन्या का परस्पर संयोग होना "गान्धर्व विवाह" है। वात्स्यायन और बोधायन इस विवाह के बड़े पोषक हैं। बोधयान के अनुसार यह विवाह स्त्री-पुरूष की इच्छाओं पर आश्रित है, इसलिए आदर्श है। इस प्रकार के विवाहों का भारत में प्रचलन हो रहा है। यदि इस विवाह में उपरोक्त बातों का ध्यान दिया गया, तो वास्तविक रूप से यह अन्य वैवाहिक समस्याओं के निराकरण में सहयोग दे सकता है और तभी हम इसे 'आदर्श विवाह के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।

भारत में वैदिक तथा उत्तर वैदिक काल के साहित्य का अध्ययन करने। से ज्ञात होता है कि उस समय अन्तर्विवाह के नियम सब द्विजों (ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य) को एक समूह में बॉधते थे। यह समूह सवर्ण कहलाता था। उस समय

www.ignited.in

अन्तर्वर्गीय (Inter Varna) विवाह भी प्रचलित थे। दसवीं शताब्दी के पश्चात् इन विवाहों का लोप होता चला गया। उस काल में कानून की दृष्टि से अन्तर्जातीय विवाह अमान्य थे। मैन के अनुसार, "इसके विरोध में कोई प्रमाण न होने के कारण विभिन्न जातियों के व्यक्तियों में विवाह अमान्य है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में लोगों ने इसके विरूद्ध आवाज उठाना शुरू कर दिया। 1872 में विशेष विवाह अधिनियम (Special Marriage Act of 1872) प्रतिपादित किया गया। इसी अधिनियम का 1923 में संशोधन किया गया 1938 में आर्यसमाज विवाह मान्यता अधिनियम (The Arya Samaj Marriage Validity Act of 1938) पास किया गया। इसके पश्चात 1946 में हिन्दू विवाह अयोग्यताएँ निवारण अधिनियम (The Hindu Marriage Disabilities Removal Act of 1946) प्रतिपादित किया गया। 1949 में हिन्दू विवाह मान्यता अधिनियम (The Hindu Marriage validity Act of 1949) प्रस्तावित किया गया। इस नियम के अन्तर्गत उन सब विवाहों को मान्य घोषित कर दिया गया जो विभिन्न धर्म जातियों या उप जातियों के सदस्यों के बीच में होते हैं। 1955 में हिन्दू विवाह अधिनियम (Hindu Marriage Act of 1955) पारित हुआ। फलस्वरूप अब कानून की दृष्टि से अन्तर्जातीय (Inter Caste) विवाह किये जा सकते हैं।

विवाह से सम्बन्धित प्राचीन परम्परावादी नियम कि "जो जिस जाति का है वह उसी जाति में विवाह करेगा।" अब यह नियम शहरो, नगरों तथा महानगरों में कमजोर पड़ता जा रहा है। शिक्षित लड़के-लड़कियाँ अपनी पसन्द का विवाह करने लगे हैं। चाहे वे किसी भी धर्म या जाति के हों। अन्तर्जातीय विवाहों का प्रतिशत दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसका कारण स्त्री शिक्षा, औद्योगिकीकरण एवं पाश्चात्य जीवन शैली से प्रभावित होना जैसे प्रमुख हैं।

अन्तर्जातीय विवाह भारत में प्राचीन काल से ही समाज में अपवाद के रूप में चले आ रहे हैं, पहले जहाँ प्राचीन भारत में अन्तर्जातीय विवाह स्त्री पुरूष की आसक्ति अथवा पुरूष की शक्ति के कारण हो जाया करते थे वहीं अब ये नयी सामाजिक परिस्थितियों के कारण हो रहे हैं।

आधुनिक भारत में अन्तर्जातीय विवाह दो रूपों में देखे जा सकते हैं

प्रथम तो वे जो अपनी जाति के बृहद दायरे में कुलीनता के विद्रोह स्वरूप हो रहे हैं। इस प्रकार के विवाहों का प्रचार बढ़ाने के मुख्य रूप से दो तथ्य दिखाई देते हैं प्रथम तो जातिवाद का विकास जिसके कारण प्रत्येक जाति अपनी उपजातियों को राजनीतिक दबाव समूह के रूप में संघटित करने का प्रयास कर रही हो तथा द्वितीय सामाजिक, आर्थिक समृद्धि को आकर्षण का प्रभाव। आज धन कमाने की क्षमता पर विशेष बल दिया जाने लगा है, इस प्रकार के विवाह का प्रचलन अब समाज में एक तरह से स्वीकार होता जा रहा है।

अन्तर्जातीय विवाह का एक अन्य स्वरूप अन्तःवर्ण जाति विवाह है, जिसका तात्पर्य है कि बिना किसी जाति भेदभाव का विवाह 15 अभी तक यह हिन्दू समाज में सामाजिक मान्यता ग्रहण नहीं कर सका है। यद्यपि विश्वविद्यालयों की सह-शिक्षा, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, व्यक्तिवादी प्रवृत्ति तथा बिलम्ब विवाहों के कारण अन्तः वर्ण-जाति विवाहों ने समाज में अपना स्थान बना लिया है। फिर भी परम्परावाद एवं सामाजिक अपयश के डर के कारण इच्छुक व्यक्ति भी इस प्रकार के विवाहों को कर पाने में अथवा उनका समर्थन करने में अपने आप को असमर्थ पाते हैं।

अन्तःवर्ण जातीय विवाह करने का साहस सामान्यतः वे व्यक्ति ही कर पाते हैं जो रूमानी प्रेम में फंस जाते हैं।

अन्तर्जातीय विवाहों को स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा गाँधीवादी आन्दोलनों द्वारा मान्यता प्रदान की गई परन्तु ये सभी आन्दोलन भी अन्तःवर्ण या अन्तर्जातीय विवाहों को विकसित करने में अधिक सफल नहीं हुये, यह आशा की गई कि नया सामाजिक विधान कुछ युवकों को इस बात की प्रेरणा देगा, किन्तु अभी तक इस दिशा में कुछ विशेष प्रगति नहीं हुई। विवाह के इस क्षेत्र में प्रगति न होने के तीन कारण बताये गये हैं-

(1) रक्त की पवित्रता को बनाये रखने की इच्छा,

(2) वैदिक संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने का प्रयास और

(3) ब्राह्मणों की श्रेष्ठता को स्थिर रखने की अभिलाषा।

अन्तर्जातीय विवाह के सम्बन्ध में ये प्रतिबन्ध निश्चिय ही विचारोत्तेजक हैं द्य रक्त की पवित्रता और वैदिक संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने की अभिलाषा के आधार पर अन्तर्जातीय विवाह के नियंत्रण को किसी भी प्रकार युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता, क्योंकि ऐसी स्थिति में ब्राह्मण और शूद्र के विवाह को स्वीकार करके रक्त की शुद्धता नहीं स्थिर की जा सकती, इससे रक्त की सम्पृक्तता हुई ही। अगर देखा जाए तो अनुलोम विवाह की प्रथा को ब्राह्मणों द्वारा मान्यता प्रदान की गई, जिससे ब्राह्मणों की सर्वोच्चता

सिद्ध होती है। यह अनुलोम विवाह प्रणाली 10वीं सदी के पश्चात् अन्तर्विवाह प्रथा के रूप में हो गयी और अपनी जाति अथवा उपजाति के बाहर व्यक्ति का विवाह करना अपराध माना गया। आज भी अन्तर्जातीय विवाह को इसी रूप में बहुत बड़ी त्रुटि कहा जा सकता है।

शनैः-शनैः हिन्दू समाज में अन्तर्जातीय विवाह प्रणाली अल्प रूप में स्वीकार की गई। प्रायः लोग अपने ही वर्ण और जाति में विवाह करते थे। अन्तर्जातीय विवाह पर कड़ा नियंत्रण था। इन प्रतिबन्धों और नियन्त्रणों के कई कारण थे- प्रथम, प्रत्येक वर्ण और जाति रक्त की शुद्धता की भ्रामक मान्यता पर विश्वास करके अपने-अपने वर्ण में ही विवाह करती रही जिससे उसके रक्त की पवित्रता बनी रह सके। द्वितीय, प्रत्येक वर्ण और जाति का व्यवसाय बहुत पहले से ही निश्चित रहा ऐसी स्थिति में किसी भी जाति का व्यक्ति नहीं चाहता था कि उसका व्यवसायिक ज्ञान दूसरी जाति जान सके। फलस्वरूप अन्तर्जातीय विवाह पर प्रतिबन्ध लगाया गया। तृतीय, ऐसी मान्यता थी कि वर्गों और जातियों की उत्पत्ति दैवीय आधार पर हुई है और इसमें किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप ठीक नहीं है। चतुर्थ, जातियों के पृथक रहने के कारण उनमें अनेक विभिन्नताएं आ गई। अन्तर्जातीय विवाह के कारण पति-पत्नी विभिन्नताओं के साथ एक दूसरे से संस्कृति के आधार पर संयोजित होने में कठिनाई का अनुभव करते थे। पंचम, जातियों के पारस्परिक भेद और विभाजन को शिक्षा के अभाव के कारण नहीं जाना जा सका तथा उसकी कृत्रिमता को नहीं पहचाना जा सका। धर्मशास्त्र निरर्थक ही इस समस्या को बढ़ावा देते रहे, लेकिन आज आधुनिक भारत में कहीं न कहीं उपर्युक्त तथ्य निरर्थक साबित होते हैं, और आज हिन्दू समाज में अन्तर्जातीय विवाह अपना स्थान लेता जा रहा है।

रास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अन्तर्जातीय विवाह के विषय में पुरूषों के विचार स्त्रियों की अपेक्षा अधिक उदार हैं। वे न केवल अन्तर्जातीय अपितु विभिन्न नस्लों वाले अन्तःप्रजातीय, विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों वालों का अनुसरण करने वाले तथा अन्तःधर्म विवाह के समर्थक हैं। अतः इस सर्वेक्षण के आधार पर अन्तर्जातीय विवाह के प्रमुख उदाहरण हैं प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भण्डारी का राजेन्द्र यादव से विवाह, प्रसिद्ध सिने तारिका हेमामालिनी चक्रवर्ती का धर्मेन्द्र देवल से विवाह और हाल ही में हुआ प्रसिद्ध सिने तारिका ऐश्वर्या राय का अभिषेक बच्चन से विवाह।

अन्तर्जातीय विवाहों में सबसे बड़ी समस्या अपने परिवार और जाति के साथ सामंजस्य और समन्वय स्थापित करने की है, प्रायः माता-पिता तथा जाति बिरादरी के अन्य सम्बन्धी ऐसे विवाह करने वालों का सामाजिक बहिष्कार कर देते हैं।

इन सभी दृष्टिकोणों से समाज का हित अन्तर्जातीय विवाहों के प्रचलन में निहित आधुनिक भारत में नगरीकरण एवं उच्च शिक्षा ने अवश्य कुछ सुविधाएँ उत्पन्न की हैं जिनके कारण व्यक्ति अब जाति के दायरे से बाहर सोचने लगा है जिससे भारतीय समाज में हिन्दू विवाह में परिवर्तन प्रारम्भ होने लगे है। यह परिवर्तन पति-पत्नी, परिवार तथा समाज से सम्बन्धित हैं। जैसे विवाह की आयु, उद्देश्य, प्रकार, निषेध, विधि-विधान, रीति-रिवाज, पति-पत्नी के अधिकार, संस्कारात्मक प्रकृति आदि और इस बदलाव का प्रमुख कारण है अन्तर्जातीय विवाह। इनमें परिवर्तन होना अवश्यम्भावी है, क्योंकि अनेक कारक है जैसे नगरीकरण, पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण, संचार तथा यातायात के साधन, आधुनिक शिक्षा और व्यवसायों की बहुलता आदि। अतः यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि सामाजिक विधान एवं उच्च शिक्षा ने कम से कम अन्तर्जातीय विवाह की नीति को स्वीकार करने में सहायता तो प्रदान की। अन्तर्राजातीय विवाहों में सहायक कारक निम्नवत् हैं

(1) भारतीय संविधान:

सामाजिक विधान का अर्थ राज्य द्वारा पारित उन कानूनों से है, जिनका उद्देश्य समाज में व्याप्त समस्याओं का समाधान करना है। सामाजिक विधान सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने तथा समाजसुधारक एवं कल्याण के लिये सामाजिक विघटन को रोकने के लिये निर्मित किये जाते हैं। मानव व्यवहार को नियमित एवं नियंत्रित करने के लिये प्रत्येक समाज के कुछ न कुछ आदर्श नियम जैसे जनरीतियों प्रथायें, रूढ़ियाँ और कानून पाये जाते हैं, जिन्हें हम सामाजिक विधान का श्रेणी में रख सकते हैं।

सामाजिक विधान को परिभाषित करते हुये डॉव सक्सेना लिखते हैं, साधारण शब्दों में वह कहा जा सकता है कि वह विधान जिसका उद्देश्य समाज को परिवर्तित अथवा पुनर्संगठित करना होता है, सामाजिक विधान की श्रेणी में आता है। इस प्रकार सामाजिक विधान में समाज सुधारक, समाज परिवर्तन, सामाजिक समस्याओं का निराकरण और सामाजिक आदर्श नियमों का प्रतिपादन एक साथ सन्निहित है।"

द्य स्पष्ट है कि सामाजिक विधान राज्य द्वारा पारित उन कानूनों को कहते हैं जिनका उद्देश्य सामाजिक बुराइयों को दूर

करना, सामाजिक विघटन को समाज में सुधार एवं परिवर्तन लाना होता है। सामाजिक विघटनों के निर्माण में आदर्श एवं व्यवहार दोनों का मिश्रण होना चाहिये। कोरे आदर्शवादी सामाजिक विधान भी सफल नहीं हो सकते। यही कारण है कि भारत में समाज कल्याण हेतु अनेक विधान बनाये गये किन्तु व्यावहारिकता के अभाव में वे कागजी कार्यवाही बनकर रह गये।

विघटन को रोकने एवं समस्याओं को हल करने के लिये सामाजिक विधानों का निर्माण अति आवश्यक है। हम यहाँ विवाह और परिवार से सम्बन्धित सामाजिक विधानों का उल्लेख करेंगे।

वैधानिक व्यवस्थाएं:

प्राचीन हिन्दू विधि सजातीय विवाह के लिए बहुत आवश्यक मानी जाती थी। विवाह में यदि वर और कन्या एक ही जाति के नहीं है तो उनके मध्य सम्पन्न हुए विवाह को स्वीकृति प्रदान नहीं की जाती थी जब तक कि ऐसे विवाहों को प्रथा के द्वारा मान्य घोषित न हो लेकिन आधुनिक दौर में भारतीय संविधान तथा उसकी वैधानिक व्यवस्थाओं ने इस प्रकार के बन्धन से समाज को मुक्त कराने का प्रयास किया है जो आज अन्तर्जातीय विवाह के रूप में देखने को मिलता है।

द्य अन्तर्जातीय विवाह अनुलोम तथा प्रतिलोम विवाह का ही स्वरूप रहे हैं । जिसमें अनुलोम विवाह को वैध तथा प्रतिलोम विवाह को अवैध माना गया है, लेकिन आधुनिक वैधानिक व्यवस्थाओं के फलस्वरूप अन्तर्जातीय विवाहों के दोनों स्वरूपों को स्वीकार किया गया और बाद में अधिनियमों के द्वारा इन्हें मान्यता भी प्रदान की गई। अतः अन्तर्जातीय विवाहों की अनुमति देने वाले मुख्य अधिनियमों की व्याख्या करना आवश्यक जान पड़ता है जो निम्नवत् है-

- विशेष विवाह अधिनियम 1872 (1823 के अधिनियम द्वारा संशोधित स्पेशल मेरिट एक्ट)
- आर्य समाज विवाह मान्यता अधिनियम 1937
- हिन्दू विवाह निर्योग्यता निवारण अधिनियम 1946

(अ) हिन्दू विवाह मान्यता अधिनियम 1949 (5) विशेष विवाह अधिनियम 1954 (अ) हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 (वर्तमान में प्रचलित) ळ) विशेष विवाह अधिनियम (1872):

बंगाल में ब्रहा समाज के अनुयायियों ने विवाह के सम्बन्ध में आन्दोलन किया कि भिन्न-भिन्न धर्मों को मानने वालों को अधिकार होना चाहिए, कि वे आपस में विवाह कर सकें। इस आन्दोलन का यह परिणाम हुआ कि 1872 में "स्पेशल मेरिज एक्ट पास हुआ। इस विवाह अधिनियम के तहत वर-वधू को घोषणा करनी पड़ती थी कि वे किसी धर्म को नहीं मानते हैं।"

द्य 1872 के कानून के अनुसार उन सब लोगों को आपस में विवाह करने का अधिकार दे दिया गया जो किसी धर्म को नहीं मानते थे। विवाह तो अब तक धर्म का एक अंग समझा जाता रहा है और प्रत्येक विवाह किसी न किसी धर्म के अन्तर्गत होता रहा है, परन्तु जो किसी धर्म को नहीं मानता, उसे भी तो विवाह का अधिकार है। अतः 1872 के विशेष विवाह कानून के अनुसार ऐसे व्यक्तियों को भी विवाह करने का अधिकार दे दिया गया।

आर्य समाज विवाह मान्यता अधिनियम (1937)

आर्य समाजी जात-पाँत के सिद्धान्त को नहीं मानते, फिर भी कई सामाजिक व्यवहार से आर्य समाजी होते हैं जो जात-पाँत तोड़कर विवाह करते हैं। आज के युग में वैवाहिक मान्यताओं में परिवर्तन आया है जो जाति, वर्ग एवं गोत्र को प्रभावित करता है। विवाह किसी भी जाति में हो सकता है, ये निर्भर करता है आज के

युवक और युवतियों की विचारधाराओं पर अपनी जाति में ही हो सकता है और स्पेशल मैरिज एक्ट के अनुसार विवाह के लिये जाति और गोत्र कोई आवश्यक नहीं है। आर्य समाज विवाह मान्यता अधिनियम 1937 में श्री युत घनश्याम सिंह के प्रयासों से यह बिल बना जिसका प्रभाव विवाह प्रथा पर पड़ा । अतः आर्य समाजियों के लिए 1937 में आर्य समाज विवाह कानून बनाया गया, जो समाज की कुरीतियों एवं परंपराओं के लिये अत्यंत उपयोगी रहा

हिन्दू विवाह निर्योग्यता निवारण अधिनियम (1946):

आर्य समाजियों के लिए तो 1937 में आर्य विवाह कानून बन गया परन्तु जो जात-पाँत तोड़कर विवाह करना चाहते थे और आर्य समाजी भी नहीं थे उनके लिए क्या हुआ? उनके लिए पहले पहल 1946 में हिन्दू विवाह निर्योग्यता निवारण अधिनियम बना परन्तु इसका लक्ष्य सिर्फ हिन्दुओं के उपजातियों में जहाँ विवाह नहीं हो सकता था उस विवाह को वैधानिक रूप देना था।

हिन्दू विवाह मान्यता अधिनियम (1949)

अब हिन्दू किसी भी जाति में विवाह कर सकें इसके लिए सबसे पहले मैसूर में 1948 में अन्तर्जातीय विवाहों को वैध करने का कानून बना। इसके बाद 1949 में भारत में समस्त हिन्दुओं के लिए हर जाति उपजाति में विवाह को वैध करार देने का उक्त कानून बना।

1949 के हिन्दू विवाह वैधता कानून के पास होने तक न्यायालय अन्तर्जातीय विवाहों के सम्बन्ध में एक मत नहीं थे। पहले कुछ समय अनुलोम तथा प्रतिलोम विवाहों को भेद न करते हुए सभी अन्तर्जातीय विवाहों को अवैध मानते रहे किन्तु बाद में इन दोनों में अंतर करते हुए बम्बई हाइकोर्ट ने प्रतिलोम विवाहों को अवैध माना और अनुलोम विवाहों को वैध माना।

प्रतिलोम अर्थात हीनवर्ण के पुरूष के साथ उच्च वर्ण की स्त्री के विवाह को अवैध घोषित करने से जो परिणाम सामने आये। उनसे इन विवाहों को कानून द्वारा वैध बनाने का आन्दोलन हुआ। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा दुष्प्रभाव स्त्रियों पर पड़ता था क्योंकि न्यायालय तथा शास्त्रीय आधार पर प्रतिलोम विवाह अवैध माने जाते थे जिसमें कानूनी दृष्टि से पति-पत्नी को साथ नहीं रहने दिया जाता था। उदाहरण से स्पष्ट होता है कि कल्याण सिंह राजपूत ने लक्ष्मी नामक ब्राह्मणी से विवाह किया। लक्ष्मी को पति के घर से ले जाया गया उसको पति के साथ नहीं रहने दिया गया, कल्याण सिंह ने पत्नी को प्राप्त करने के लिए अदालत का दरवाजा खटखटाया, अदालत ने निर्णय दिया कि यदि सचमुच विवाह हो चुका है, परन्तु प्रतिलोम विवाह होने से कानून की दृष्टि से यह कोई विवाह नहीं है। इसलिए कल्याण सिंह लक्ष्मी को पत्नी रूप में अपने पास रखने का अधिकारी नहीं है।

शिक्षा प्रणाली:

अन्तर्जातीय विवाहों के सहायक कारकों में यहां की शिक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान है। जो अन्तर्जातीय विवाह को बढावा देने वाले कारकों में महत्वपूण्ज्ञ है। भारतीय समाज सदैव ही ज्ञान का भण्डार तथा ज्ञान का पोषक रहा है। प्राचीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा में यह भेद है कि प्राचीन शिक्षा ब्राह्मणों के हाथों में थी जिसके कारण साधारण मनुष्य अपने पुराने अन्धविश्वासों में जकड़ा रहता था और उन रूढ़िवादी परम्पराओं से बाहर नहीं आना चाहता था। शिक्षा ब्राह्मणों के हाथों में होने के कारण प्राचीन शिक्षा में जाति व्यवस्था के प्रति शिष्यों में अटूट श्रद्धा भक्ति भर दी जाती थी और उस शिक्षा में पले हुये, जाति व्यवस्था को एक अटल व्यवस्था समझते थे। अछूतों को दूसरे लोग ही अछूत नहीं समझते थे बल्कि स्वयं अपने को पिछले जन्म के किन्हीं पापों के कारण अछूत समझते थे। अंग्रेजों के युग में आधुनिक का प्रचार हुआ तथा ब्रिटिश शासक काल में जिस तीव्र गति से आधुनिक शिक्षा का प्रचार व प्रसार हुआ और शिक्षा जन-जन तक पहुँचने लगी। अब शिक्षा केवल ब्राह्मणों तक ही सीमित नहीं रही अब धीरे-धीरे शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन होने लगे।

प्राचीन शिक्षा धर्म मूलक थी, परन्तु आधुनिक शिक्षा धर्म निरपेक्ष है। इसका जहाँ धर्म मात्र को धक्का लगा, वहाँ जाति व्यवस्था को भी इसका धक्का पहुँचा, और इस प्रकार नवयुवकों तथा युवतियों की इस व्यवस्था में श्रद्धा नहीं रही। आधुनिक शिक्षा ने लोक जीवन को नवीन विचारों से भर दिया। उदाहरणार्थ जाति व्यवस्था मनुष्य-मनुष्य के बीच भेदभाव पर टिकी हुई थी, वर्तमान शिक्षा ने एकता, समानता, विश्व बन्धुत्व, स्वतन्त्रता लोकतन्त्रता आदि ने पश्चिम की ऑधी को पूर्व में पैदा कर दिया जिससे जाति व्यवस्था के बन्धन ढीले पड़ने लगे।

उपसंहार

प्राचीन धर्मशास्त्रों के अनुसार विवाह एक धार्मिक कृत्य है। मानव जीवन जिन चार आश्रमों- ब्रह्मचर्य, ग्रहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास में विभक्त है। उनमें गृहस्थ आश्रम को सबसे प्रधान व आधारभूत माना गया है। अतः प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। कि वह विवाह करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करे। पत्नी के बिना कोई भी यज्ञ व धार्मिक कृत्य पूरा नहीं हो सकता। अतः विवाह करना प्रत्येक मनुष्य का धार्मिक कृत्य हो जाता है। ऋग्वेद के अनुसार देव पूजन में पति और पत्नी एक दूसरे के सहायक होते हैं।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में कहा गया है कि जो पुरूष अपत्नीक (पत्नी से रहित) हो, वह 'श्रयज्ञिय' (जिसे यज्ञ करने का अधिकार न हो) होता है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार जाया (स्त्री) पुरूष की 'अघ (आधी) होती है, और उसे प्राप्त करके ही मनुष्य 'सर्व' (पूर्ण) बनता है। अग्निहोत्र आदि यज्ञों के अनुष्ठान के लिये पत्नी का इतना अधिक महत्व था, कि पत्नी की मृत्यु हो जाने पर पुरूष के लिये पुर्नविवाह का इसी कारण विधान किया गया था, ताकि वह यज्ञों को सम्पन्न कर सके।। याज्ञवल्य स्मृति में पुर्नविवाह के पक्ष में यही युक्ति दी गई है। वहाँ लिखा है कि पत्नी के दाह संस्कार के पश्चात् 'अविलम्ब' अन्य स्त्री से विवाह कर लिया जाये। धार्मिक अनुष्ठानों के लिये पत्नी का जो महत्व था, उसी के कारण उसे 'सहधर्मिणी और 'अर्धागिनी' कहा जाता था।

www.ignited.in

वैदिक संहिताओं और ब्राह्मण ग्रन्थों में विवाह को जिस प्रकार एक धार्मिक कृत्य के रूप में प्रतिपादित किया गया है। धर्मसूत्रों तथा स्मृतियों ने प्रायः उसी का अनुसरण किया। क्योंकि विवाह एक धार्मिक कृत्य था, अतः पति और पत्नी का सम्बन्ध भी शाश्वत (अविछिन्न) माना गया था और धर्म ग्रन्थों को यह अभीष्ट नहीं था, कि तलाक आदि द्वारा इस सम्बन्ध का विच्छेद हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ऋग्वेद,:सायण भाष्य सहित, संपा. विश्वबंधु विश्वेश्वरानंद वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट होशियारपुर, प्रथम संस्करण (1961), स्वाध्याय मण्डल पार्टी द्वितीय संस्करण।

2. अथर्ववेद,:सायण भाष्य सहित, संपा. विश्वबन्धु विश्वेश्वरानन्द वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट होशियारपुर, प्रथम संस्करण (1961), स्वाध्याय मण्डल पार्टी द्वितीय संस्करण।

3. रामायणः तिलकाख्य व्याख्या समेत, निणर्य सागर, बम्बई।

4. वाल्मीकि रामायणः निणर्य सागर प्रेस, बम्बई (1929) गीता प्रेस, गोरखपुर, तृतीय संस्करण

5. रामायणः गोस्वामी तुलसीदास जी कृत पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र, प्रकाशक स्टीम प्रेस, बम्बई-4

6. महाभारतःभंडारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना कुंभघोणम्, स्वाध्याय मण्डल पार्टी द्वारा प्रकाशित संस्करण, नीलकण्ठ की टीका सहित, पूना 1929-33 गीता प्रेस गोरखपुर ।

7. तैत्तिरीय संहिताः आनन्द आश्रम पूना, माधव भाष्य सहित, कलकत्ता 1899

8. तैत्तिरीय ब्राहाणः आनन्द आश्रम पूना, संपा. राजेन्द्र मिश्र, कलकत्ता 1870

9. ऐतरेय ब्राह्मणःआनन्दाश्रम पूना, 1893 अनुवादक-कीथ, हावर्ड ओरियण्टल सीरीज भाग-25, कैमिब्रज 1920

Corresponding Author

Savita*

M.A.C.W Jhajjar Ad-Hok. Lecturer in History, Haryana

mahipalboora12880@gmail.com